# सभ्यता का समग्र बोध

शम्भू जोशी

शम्भू जोशी महात्मा गांधी अंतर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा के दूरस्थ शिक्षा केन्द्र में सहायक प्रोफेसर के पद पर कार्यरत हैं। अहिंसा एवं शांति अध्ययन के व्यापक पहलुओं पर गम्भीर लेखन। पंडिता रमाबाई एवं टॉलस्टॉय पर दो पुस्तकों का अनुवाद। वर्तमान में गांधी एवं श्रम समस्या पर कार्य कर रहे हैं।

'हिन्द स्वराज' में वर्णित विचारों का प्रस्फुटन इस रचना से पहले हो चुका था। इस रचना में गांधी ने जिन विषयों पर लिखा उन पर वह पहले भी लिख चुके थे। इसे गांधी वाङ्मय के खंडों में देखा जा सकता है। केवल विचार ही नहीं अपितु संवाद शैली का प्रयोग भी ट्रांसवाल निर्णय को आम लोगों तक पहुंचाने हेतु कर चुके थे। हिन्द स्वराज लिखने से पूर्व गांधी जी ने अपने परम मित्र हेनरी पोलक को 14 अक्टूबर 1909 को एक पत्र लिखा। उस पत्र को देखने पर स्पष्ट होता है कि हिन्द स्वराज लिखने की आधारभूमि तैयार हो चुकी थी। चार्ल्स एफ.एण्ड्रूज ने गांधी पर अपनी पुस्तक *'महात्मा गांधी हिज लाइफ एंड आइडियाज'* (जयको पब्लिशिंग हाउस, मुम्बई, पुनर्मुद्रण 2007) में इस पत्र को आधार बना कर एक अध्याय लिखा और उसे नाम दिया *'कन्फेशन ऑफ फेथ'*(देखें वही, पृ.127)। इस पत्र को पढ़ने पर सहसा यह अनुभव किया जा सकता है कि हिन्द स्वराज सार के रूप में हमारे सामने है।

इन संदर्भों पर बात करके हम यह प्रश्न खड़ा कर सकते है कि आखिर हिन्द स्वराज में ऐसा क्या है जो उसे इतनी विशिष्ट पुस्तक बनाता है। जबाब है : सभ्यता का समग्र बोध। पूर्व में लिखे समस्त विचार इस पुस्तक में एक तार्किक एवं व्यवस्थित रूप ग्रहण करते हैं।

हिन्द स्वराज लिखते समय गांधी की सभ्यता समीक्षा दृष्टि बिल्कुल स्पष्ट थी। वस्तुतः वरिष्ठ आलोचक पुरुषोत्तम अग्रवाल के शब्दों में कहें तो वह *सभ्यता मात्र* की समीक्षा है। (शब्दों पर जोर लेखक का) गांधी आधुनिक व पूर्वी दोनों सभ्यताओं का विश्लेषण करते हैं। दोनों पर अपने विचार व्यक्त करते हैं। एक सच्ची सभ्यता किसे कहा जाय इसे परिभाषित कर बहस की आधारभूमि प्रस्तुत करते हैं। उनका विचार है कि आधुनिक सभ्यता के खुद को श्रेष्ठ बताने और दूसरों पर थोपने, साथ ही पराधीन राष्ट्रों की सभ्यता को हीन बता कर उन्हें खारिज करने, के दावों पर बहस हो।

महात्मा गांधी द्वारा लिखित पुस्तक हिन्द स्वराज ऐसी कुंजी है जिसके सहारे गांधी जी के विचार को सूत्र रूप में आसानी से समझा जा सकता है। 1909 में लिखित पुस्तक गांधी जी के विचारों का सार है। इस पुस्तक का महत्व इसलिए भी है कि इसमें गांधी जी द्वारा की गयी आधुनिक सभ्यता की समीक्षा न केवल विचारोत्तेजक है अपितु यह आधुनिक सभ्यता के समर्थन में खड़े दावों की नींव को भी चरमरा देती है। इस पुस्तक में आधुनिक सभ्यता के कुप्रभावों/दुष्परिणामों का उल्लेख तो है

ही साथ ही भारतीय जनता की कायरता, नासमझी, आधुनिक सभ्यता के पीछे दौड़ने की प्रवृति का उल्लेख व आलोचना कर आत्मशुद्धि को स्थान प्रदान किया है।

गांधी जी के द्वारा की गयी सभ्यता समीक्षा के पूर्व निम्नलिखित विचार जान लेना अवश्यक है–

1. गांधी जी आधुनिक सभ्यता की आलोचना करने वाले तोलस्तोय, रस्किन, एडवर्ड कारपेण टर आदि से प्रभावित अवश्य हैं परंतु साथ ही इंग्लैण्ड में स्वयं के अनुभव भी इस प्रभाव के साथ संयुक्त है। विचार के स्तर पर चाहे आधुनिक सभ्यता की आलोचना नवीन न हो परंतु भारतीय संदर्भ में उसकी प्रस्तुति अवश्य ही मौलिक है।

2. गांधी जी के उद्देश्यों को तात्कालिक व दीर्घकालिक में बांटा जा सकता है। 1909 में पुस्तक में गांधी जी का तात्कालिक लक्ष्य राजनैतिक स्वतंत्रता अवश्य रहा हो परंतु दीर्घकालिक लक्ष्य 'स्वराज' रहा है। यहां यह द्रष्टव्य है कि इन उद्देश्यों में विरोधाभास नहीं बल्कि ये पूरक हैं।

3. गांधी जी आधुनिक सभ्यता और यूरोपीय/पाश्चात्य सभ्यता में अंतर करते हैं। हालांकि कई बार वह आधुनिक व पश्चात्य सभ्यता को पर्याय के रूप में इस्तेमाल करते हैं। औद्योगिक क्रांति के पूर्व यूरोप की एक ईसाई सभ्यता थी। वह पूर्व सभ्यता के नजदीक थी। आधुनिक यांत्रिक सभ्यता की चपेट में यूरोप भी आ गया है। ब्रिटेन/यूरोप इस यांत्रिक आधुनिक सभ्यता का प्रतिनिधित्व कर रहा है। अतः स्वयं ब्रिटेन/ब्रिटिश भी आधुनिक सभ्यता के शिकार हैं मगर वह इसे रोग नहीं मानते हैं। गांधी जी अपनी सभ्यता समीक्षा द्वारा यह स्पष्ट करना चाह रहे हैं कि न केवल भारतीय, ब्रिटेन अपितु समस्त मानवीय समाज को इस यांत्रिक सभ्यता से बचाना है क्योंकि यह आत्मघाती एवं अधार्मिक है। सभ्यता समीक्षा को समूची मानवीय सभ्यता के फलक पर प्रस्तुत करने के कारण ही गांधी जी यह कह सके कि यह पुस्तक *'द्वेष धर्म की जगह प्रेम धर्म सिखाती है'*। यह ऐसी कृति है जिसमें भारत ब्रिटिश साम्राज्य से मुक्त हो यह गांधी जी की चिन्ता है जिसे आगे चल कर समस्त मानव समुदाय की मुक्ति से जोड़ा जा सकता है। इस मायने में यह पुस्तक अद्वितीय है। जो अपने विरोधियों के कल्याण ा का भी प्रस्ताव करती है।

4. गांधी सभ्यता समीक्षा करते हुए प्रश्न उठाते हैं कि सभ्यता का आधार क्या हो? सभ्यता किसे कहा जाय इसी को विश्लेषित करते हुए आधुनिक व पूर्वी सभ्यता दोनों की आलोचना करते हैं। सभ्यता के ऐसे आधारों की तलाश करते हैं जो मानव जाति के लिए कल्याणकारी हो।

'सभ्यता समीक्षा' में सर्वप्रथम इस बात को जानना आवश्यक है कि गांधी जी के अनुसार सभ्यता का क्या अर्थ है? गांधीजी के अनुसार– *"सभ्यता वह आचरण है जिससे आदमी अपना फर्ज अदा करता हैं। फर्ज अदा करने के मानी है नीति का पालन करना। नीति के पालन का मतलब है– अपने मन व इंद्रियों को बस में रखना। ऐसा करते हुए हम अपने (अपनी असलियत को) पहचानते हैं। यही सभ्यता है। इससे जो उलटा है वह बिगाड़ करने वाला है।"* (हिन्द स्वराज , महात्मा गांधी, नवजीवन ट्रस्ट, 2008 पुनर्मुद्रण, पृ.-42-43)

गांधी जी जी सभ्यता की इस परिभाषा की कसौटी पर आधुनिक सभ्यता की समीक्षा करते हैं। आधुनिक सभ्यता की समीक्षा हेतु जो तर्क उठाते हैं, उससे इसके मूल पर ही प्रहार करते हैं। गांधी जी के अनुसार यह सभ्यता शक्ति के नियम पर टिकी हुई है जबकि गांधी जी संसार को संचालित करने वाला नियम प्रेम मानते हैं। अतः आधुनिक सभ्यता मूलरूप से गलत धारणा पर टिकी हुई है, वह लोभ, हिंसा, शक्ति, अनियंत्रित प्रतिस्पर्धा पर आधारित है। यदि आधुनिक सभ्यता को उसके आधारों सहित स्वीकार करते हैं तो हम अमानवीयता को मौन समर्थन देने लगते हैं। शक्ति आधारित किसी भी व्यवस्था को यह अधिकार प्राप्त हो जाता है कि वह कमजोर को दबाये क्योंकि बिना उत्पीड़न, दमन, शोषण के शक्ति प्रदर्शन नहीं होगा, अतः शक्ति आधारित व्यवस्था स्वीकारने से हम दमन, उत्पीड़न,

शोषण का समर्थन करने लगते हैं। अधिक स्पष्ट रूप में कहें तो गांधी निम्नलिखित प्रमुख कारणों से आधुनिक सभ्यता का विरोध करते हैं–

1. यह सभ्यता चूंकि लोभ, हिंसा, शक्ति, प्रतिस्पर्धा, भौतिक सुखों की अतृप्त लालसा पर टिकी है अतः *'जिसकी लाठी उसकी भैंस', 'समर्थतम का अस्तित्व'* ही वह नियम हो जाते हैं, जिसके आधार पर समाज व्यवस्था चलती है। अतः यह मूल रूप से ही समस्यापूर्ण है। यह दोनों नियम स्वीकार करने से समाज में अमानवीय परिस्थितियां उत्पन्न होने पर भी उन्हें वैधता प्रदान हो जाती है। शोषण ा, दमन आदि समाज व्यवस्था की विकृत स्थिति का द्योतक नहीं वरन समाज व्यवस्था के 'उत्तरोत्तर विकास' की अनिवार्य लागत (essential cost) के रूप में देखे जाते हैं।

2. यह सभ्यता भी नैतिकता को स्वीकार करती है परंतु उसे जीवन के सभी क्षेत्रों में लागू नहीं करती है अर्थात नैतिक/मानवीय गुणों से सम्बंधित आचरण आध्यात्मिक जीवन तक ही उचित है। समाज व्यवस्था, राजनैतिक, आर्थिक संरचना आदि में संचालित होने वाला नियम नैतिकता न होकर *'समर्थतम का अस्तित्व', 'जिसकी लाठी उसकी भैंस'* ही होता है।

3. गांधी जी आधुनिक सभ्यता के लक्षण बताते हुए स्पष्ट करते हैं कि सभ्यता के इन आधारों को वह अस्वीकार करते हैं– *''पाश्चात्य संस्कृति अर्थात पश्चिम में मान्य आज के आदर्श और उन पर प्रतिष्ठित पाश्चात्य प्रवृतियां। पशुबल को प्रधानपद, धन को भगवान का ओहदा, दैहिक सुख की प्राप्ति में समय का अपव्यय, अनेक प्रकार के दुनियावी भोगों को पाने के लिए अद्भुत साहस, यांत्रिक शक्ति को बढ़ाने के निमित्त मानसिक शक्तियों का असीमित प्रयोग, संहारक अस्त्रों को खोज निकालने में करोड़ों रुपयों का खर्च और यूरोप से बाहर के राष्ट्रों की जनता को हीन समझना धर्म। इस संस्कृति को मै सर्वथा त्याज्य मानता हूं।''* (स.गां.वा.खंड.22.पृ.181)

साथ ही वह अपने दृष्टिकोण में स्पष्ट भी थे– *''मुझमें इतना स्वीकार करने की नम्रता तो है ही कि पश्चिम में ऐसी बहुत सी चीजें हैं जिन्हें ग्रहण करने से हमारा लाभ हो सकता है। बुद्धि और ज्ञान किसी एक महादेश या एक जाति की बपौती नहीं है। मैं जो पाश्चात्य सभ्यता का विरोध करता हूं वह असल में उसकी अधाधुंध और विवेकशून्य नकल की उस प्रवृत्ति का विरोध करता हूं, जिसका आधार यह गलत धारणा है कि एशियाई लोग तो पश्चिम से आने वाली तमाम चीजों की नकल करने के अलावा और किसी लायक हैं ही नहीं।''* (सं.गां.वा.खंड.39, पृ.-422)

प्रमुख कारणों के अतिरिक्त अन्य कारण भी हो सकते हैं। गांधी जी की स्वयं की धारणा को देखें तो वह यह धारणा मानते थे कि प्रेम पर ही सृष्टि टिकी हुई है, प्रेम ही समाज व्यवस्था का नियम है। गांधी जी का स्पष्ट कहना था कि नैतिकता/अहिंसा/प्रेम/सहयोग मानव जीवन के किसी एक पक्ष तक ही सीमित नहीं होने चाहिए अपितु समस्त समाज व्यवस्था को जांचने की कसौटी होने चाहिए। समाज व्यवस्था का प्रत्येक क्षेत्र नैतिकता से संचालित होना चाहिए। तीसरे कारण में वह स्पष्ट करते हैं कि पूर्व व पश्चिमी सभ्यता दोनों आधुनिक सभ्यता के चंगुल में है। आधुनिक सभ्यता ने पश्चिमी/यूरोपीय लोगों को अपने को अभिव्यक्त करने का माध्यम बना रखा है।

अतः यह बात स्पष्ट है कि गांधी जी का विरोध अंग्रेजों से नहीं अंग्रेजियत से था, वह अंग्रेजियत जो आधुनिक सभ्यता का अनुकरण करने वाली है। भारत में ब्रिटिश साम्राज्य इसी सभ्यता का पाप है, अतः गांधी जी कहते हैं : *"मेरी पक्की राय है कि हिन्दुस्तान अंग्रेजों से नहीं बल्कि आ. जकल की सभ्यता से कुचला जा रहा है। मुझे तो धर्म प्यारा है इसीलिए पहला दुःख मुझे यह है कि हिन्दुस्तान धर्मभ्रष्ट होता जा रहा है। धर्म का अर्थ मैं यहां हिन्दू, मुस्लिम या जरथोस्ती धर्म नहीं करता। लेकिन इन सब धर्मों के अंदर जो धर्म है, वह हिन्दुस्तान से जा रहा है।"* (हिन्द स्वराज, महात्मा गांधी, नवजीवन ट्रस्ट, 2008 पुनर्मुद्रण, पृ.-42-43)

गांधी जी ने पाश्चात्य सभ्यता के प्रति अपने दृष्टिकोण को स्पष्ट किया : *"आधुनिक सभ्यता*

लगातार



tadbhav.com home page

*का मुख्य लक्षण यह है कि यह आत्मा की बजाय शरीर को महत्व देती है और शरीर का गौरव करने हेतु सर्वस्व का होम करती है।"* (महात्मा गांधी, कांतिलाल शाह द्वारा उद्धृत, हिन्द स्वराज का संदेश, सेवाग्राम आश्रम प्रतिष्ठान, सेवाग्राम, 1992, पृ.-121)

1910 में जोहान्सबर्ग में एक भाषण में स्पष्ट किया : *"आधुनिक सभ्यता का सार दो बातों में दर्शाया जा सकता है। एक तो यह अनवरत प्रवृत्ति सिखाती है और यह स्थल व काल को मिटा देना चाहती है। आज तो प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी काम में जुटा हुआ दिखता है। यह एक जोखिम भरी निशानी है। लोग अपनी रोटी कमाने में ही इतने मसगूल हैं कि उन्हें अन्य किसी बात के लिए सोचने की फुर्सत नहीं। आधुनिक सभ्यता लोगों को जड़वादी बनाती है। उनके विचारों को शरीर सुख के साधन बढ़ाते रहने पर ही केन्द्रित करती है। इस प्रकार की दौड़ धूप में उच्च प्रकार की प्रवृत्तियों के लिए समय ही नहीं मिलता।"* (महात्मा गांधी, कांतिलाल शाह द्वारा उद्धृत, हिन्द स्वराज का संदेश, सेवाग्राम आश्रम प्रतिष्ठान, सेवाग्राम, 1992, पृ.-144-45)

महात्मा गांधी द्वारा आधुनिक सभ्यता के खींचे चित्र की भांति 60-70 वर्ष बाद सुप्रसिद्ध तत्वज्ञ(सामाजिक मनोविज्ञानी) एरिक फ्रॉम ने ऐसा ही चित्र प्रस्तुत किया :*"औद्योगिक सभ्यता दो बिल कुल ही खोटी विचारधारा के आधार पर खड़ी की गयी है। एक तो यह मान्यता कि जीवन का ध्येय इंद्रिय सुख है अतः मनुष्य के मन में उठने वाली हर एक इच्छा की पूर्ति करनी चाहिए तथा अधिक से अधिक भोग विलास के द्वारा ही सुख प्राप्त किया जा सकता है। दूसरी यह मान्यता कि प्रतिस्पर्धा में सबसे आगे निकल जाने की प्रवृत्ति, स्वार्थ तथा भोग लालसा ही मुख्य प्रेरक बल है तथा उसी से सामंजस्य एवं शांति निष्पन्न होगी।"* (एरिक फ्राम, कांतिलाल शाह द्वारा उद्धृत, हिन्द स्वराज का संदेश, सेवाग्राम आश्रम प्रतिष्ठान, सेवाग्राम, 1992, पृ.-145)

महात्मा गांधी के लिए नीति, संयम, सदाचार, परोपकार, प्रेम, शांति आदि मूल्यों का समाज के नियामक मूल्यों के रूप में प्रमुख स्थान है। अतः आधुनिक सभ्यता के द्वारा किये गये कार्यों से व्यथित होकर 1931 में लंदन में भारतीय विद्यार्थियों की सभा में कहते हैं कि *'मुझे अपने देशवासियों की पीड़ाओं के निवारण से भी ज्यादा चिन्ता मानव प्रकृति के बर्बरीकरण को रोकने की है।'*

उपरोक्त कथन ही हिन्द स्वराज के मूल में है। एक साझी मानवीय सभ्यता को बनाये रखना है तो अहिंसा ही एकमात्र मार्ग है। दक्षिणी अफ्रीका में रेलयात्रा के दौरान रेल के डिब्बे से बाहर फेंके जाने की घटना और हिन्द स्वराज में गहरा सम्बंध है। रेल की घटना का गांधी ने बहुत मार्मिक वर्णन किया। अपने भीतर पैदा हुए डर को अभिव्यक्त किया साथ ही एक दृढ़ निश्चय की कठिन प्रक्रिया को चुना। उन्होंने व्यक्ति को नहीं, संरचना को दोषी माना। रंगभेद समाप्त करने के निश्चय को प्राप्त करने में जुट गये। यह एक संरचना से लड़ाई थी, व्यक्ति से नहीं। उनके शब्दों में– *''मुकदमा अधूरा छोड़ कर भागना तो नामर्दी होगी। मुझे जो कष्ट सहना पड़ा है, सो तो ऊपरी कष्ट है। वह गहराई तक पैठे हुए महारोग का लक्षण है। यह महारोग है रंगद्वेष। यदि मुझमें इस गहरे रोग को मिटाने की शक्ति हो, तो उस शक्ति का उपयोग मुझे करना चाहिए। ऐसा करते हुए स्वयं जो कष्ट सहने पड़े सो सब सहने चाहिए और विरोध रंगद्वेष को मिटाने की दृष्टि से करना चाहिए।''* (सत्य के प्रयोग अथवा आत्मकथा, पुनर्मुद्रण, दिसम्बर 2003, नवजीवन प्रकाशन, पृ.102)

यहां यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि इस घटना से उन्होंने व्यक्ति और संरचना में तथा हिंसा और अहिंसा में भेद किया। अपने मार्ग का चयन किया। इस घटना के 14-15 साल बाद लिखी हिन्द स्वराज में उनका यही दृष्टिकोण गुंजायमान होता है। वह अंग्रेज/यूरोपीय जनता व आधुनिक सभ्यता में फर्क करते हैं। साथ ही एक ऐसे समय में (20वीं सदी के प्रथम दशक में) जहां युद्ध, हिंसा समस्त समाधानों को सुलझाने का लगभग एकमात्र माध्यम माना जाता था; अहिंसा के मार्ग की उद्घोषणा

की, न केवल उद्घोषणा अपितु हिंसा स्वराज के लिखे जाने तक एक अहिंसा आंदोलन की अगुवाई कर रहे थे। इसी के साथ यह तथ्य भी काबिलेगौर है कि इसी हिन्द स्वराज के जरिए उन्होंने साध्य साधन की बहस को भी विचार के लिए प्रस्तुत किया। हिन्द स्वराज लिखते समय हिंसा व युद्ध किसी भी साध्य को पाने के वैध साधन समझे जाते थे। यह माना जाता था कि अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए किसी भी साधन का उपयोग किया जा सकता है। कहने का अर्थ कि साध्य ही साधन को परिभाषित करते थे। अगर आपका उद्देश्य पवित्र है तो उसे अपवित्र दूसरे शब्दों में हिंसा व युद्ध के जरिए प्राप्त करना भी गलत नहीं है। गांधी इस बहस में नवीन दृष्टिकोण रखते हुए कहते हैं कि साध्य साधन में वृक्ष बीज का साम्य है। अगर साधन ही अपवित्र है तो साध्य चाहे कितना भी पवित्र क्यों न हो, अपवित्र साधन पवित्र साध्य को भी अपवित्र कर देते हैं। गांधी इस साध्य साधन की बहस को सारे जीवन पर लागू करते हैं। व्यक्तिगत जीवन से लेकर अंतर्राष्ट्रीय जीवन में भी इसे लागू करने को प्रस्तावित करते हैं। हिन्द स्वराज इस नजरिये से काफी मौलिक एवं सशक्त हस्तक्षेप है। इसे नजरअंदाज करना नामुमकिन है।

यह रचना इसलिए भी महत्वपूर्ण है कि गांधी अपने दमनकारी के कल्याण की कामना करते हैं। उसे भी उस आधुनिक सभ्यता के पाश से मुक्त कराना चाहते हैं जो उन पर अत्याचार कर रहा है। इसलिए गांधी का ही साहस व आत्मविश्वास है कि वह इस पुस्तक के बारे में यह कह सके कि यह पुस्तक द्वेष धर्म की जगह प्रेमधर्म सिखाती है।

हमें यह देखना चाहिए कि गांधी उन महत्वपूर्ण दूरदर्शी विचारकों में से थे जिन्होंने उपनिवेश को उसके आर्थिक पक्ष में ही नहीं अपितु उसके सांस्कृतिक मनोवैज्ञानिक स्वरूप के साथ देखा। गांधी जी ने आधुनिक सभ्यता एवं उपनिवेशवाद को एक साथ देखने का प्रयास किया। उपनिवेशवाद की जड़ में आधुनिक सभ्यता है। गांधी जी ने इसे आधुनिकता, आधुनिकीकरण की सांस्कृतिक प्रक्रिया से जोड़ने का सफल प्रयास किया। हिन्द स्वराज को साम्राज्यवाद एवं उपनिवेशवाद पर गांधी की टीका भी कहा जा सकता है। हो सकता है कि आलोचक इस विचार से सहमत न हों, मेरा विनम्र अनुरोध है कि इस तर्क को समझ लिया जाय। प्रश्न यह उठता है कि जैसाकि अधिकतर आलोचक कहते हैं कि हिन्द स्वराज में हिंसा अहिंसा की बहस ही प्रमुख है; अगर स्वराज्य प्राप्ति हेतु हिंसा अहिंसा की ही बात प्रमुख होती तो गांधी को क्या आवश्यकता थी कि वह शिक्षा, हिन्दू मुस्लिम सम्बंध, रेलगाड़ी, वकील, शहरी सभ्यता, प्रगति, संसद आदि प्रश्नों पर बहस करते। शायद गांधी की दृष्टि ज्यादा तीक्ष्ण एवं गहरी थी। उन्होंने इस बात को जल्द ही पहचान लिया था कि हिंसा पर आधारित आधुनिक सभ्यता ने जिस अधिरचना को जन्म दिया है उसके समस्त आधारों में यह हिंसा दृष्टि विद्यमान है। अतः सूक्ष्म विश्लेषण कर उनकी हकीकत पर विचार किया जाय। इनके हिंसक प्रभावों को आम जनता के सामने लाया जाय। इसीलिए गांधी हिंसा आधारित अधिरचना को अपने विश्लेषण का आधार बनाते हैं।

संसद पर उनके विचारों को सामान्यतः संसदीय लोकतंत्र के विरोध में शामिल कर लिया जाता है। वस्तुतः ऐसा नहीं है। गांधी के लिए लोकतंत्र एक राजनीतिक व्यवस्था के रूप में सर्वश्रेष्ठ विकल्प रहा है। मगर हिन्द स्वराज में उनकी आलोचना से यह सीखना चाहिए कि संसदीय लोकतंत्र की सीमाएं क्या हो सकती हैं। साथ ही एक राजनीतिक व्यवस्था के रूप में ब्रिटिश संसदीय व्यवस्था एक पड़ाव है वह मंजिल नहीं है। विश्व के अन्य देश इस व्यवस्था की नकल कर अपने यहां ज्यों का त्यों स्वीकार नहीं करें। ब्रिटिश संसदीय व्यवस्था ब्रिटेन की आवश्यकता के अनुरूप लोकतंत्र का एक प्रकार मात्र है, वह लोकतंत्र का एकमात्र प्रकार नहीं है। प्रकारांतर से गांधी यह स्पष्ट करना चाहते हैं कि लोकतंत्र के कई अन्य रूप देश की आवश्यकताओं के अनुरूप हो सकते हैं। ब्रिटिश संसदीय व्यवस्था की नकल कर अन्य देशों में इसे 'ज्यों का त्यों' लागू करना लोकतंत्र के विकास की नयी सम्भावनाओं को खारिज करना तथा अपने देश की आवश्यकता को नजरअंदाज करना हो सकता है।

तद्भव



tadbhav.com home page

रेलगाड़ी का विरोध गांधी और हिन्द स्वराज के आलोचकों का प्रिय विषय रहा है। आलोचकों के अनुसार गांधी का रेल विरोध एक प्रतिगामी विचार है। यह मनुष्यता के विकास को पीछे धकेलने वाला है। मनुष्य जाति की खोजों से मनुष्यों को वंचित करना है। गांधी ने अपने विचार जिस भाषा में व्यक्त किये हैं वह आलोचकों का ज्यादा निशाना बनी है, गांधी की दृष्टि पर आलोचकों का ध्यान कम गया है।

रेलगाड़ी का विरोध वस्तुतः एक सामयिक संदर्भ का परिणाम है। इसका जिक्र हमें एंथोनी जे. पारेल की पुस्तक *हिन्द स्वराज एंड अदर राइटिंग्स* में मिलता है। रेलगाड़ी शीर्षक वाले अध्याय की पाद टिप्पणी में गांधी की रेल आलोचना को वह स्पष्ट करते हैं। परेल के अनुसार रेल की आलोचना का संदर्भ दादा भाई नौरोजी एवं आर.सी. दत्त के कामों से मिलता है। आर.सी. दत्त ने ब्रिटिश भारत में गरीबी उन्मूलन के संदर्भ में विचार किया कि सिंचाई पर निवेश करना ज्यादा जरूरी है बनिस्पत रेल में निवेश करने के। मगर न तो ब्रिटिश निजी निवेशक और न ही उपनिवेश सरकार सिंचाई पर बल देती थी। इन दोनों के लिए रेल पर निवेश करना ज्यादा फायदेमंद था। जबकि एक कृषिप्रधान देश में सिंचाई पर निवेश ज्यादा जरूरी था। श्री दत्त के मुताबिक अकाल के समय अनाज रेलगाड़ी से पहुंचाया जा सकता है। ध्यान रखना है कि रेल अनाज *पैदा* नहीं कर सकती है। अनाज की पैदावार का सिंचाई से गहरा सम्बंध है। सिंचाई के बगैर गरीबी व अकाल की समस्या दूर नहीं हो सकती है। अतः रेल के विकास पर अत्यधिक जोर भारत सरकार की बेईमानी है। नौरोजी ने अपने निकास सिद्वांत (Drain theory) को बतलाने में रेल का उदाहरण प्रस्तुत किया। (देखें– एंथोनी जे परेल, *हिन्द स्वराज एंड अदर राइटिंग्स,* केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, पुनर्मुद्रण 2007, नयी दिल्ली, पृ.-46)

एक अन्य बात पर विचार करना चाहिए कि रेलगाड़ी के जिन अवगुणों की चर्चा गांधी जी ने की, वे सभी गुण तो जहाज पर भी लागू होते हैं, फिर रेलगाड़ी को इतना महत्व क्यों? ऐसा प्रतीत होता है कि इसके पीछे एक सूक्ष्म विचार है, जो एक ओर तकनीक के मानव जीवन एवं समाज पर पड़ने वाले गहरे प्रभावों की पड़ताल की मांग करता है तो दूसरी ओर समय व स्थान को जीतने की लालसा, अंधी दौड़ की बहस को आम जनता के सामने रखता है। हमारे जीवन में गति तीव्र से तीव्रतर और तीव्रतर से तीव्रतम हो रही है मगर हम इस पर विचार नहीं कर रहे हैं कि हमारी दिशा क्या है, हम किस दिशा में जा रहे हैं। आलोचकों को इस दृष्टि से भी विचार करना चाहिए कि क्या रेलगाड़ी केन्द्रीकरण को बढ़ावा देती है? यह जानना जरूरी है क्योंकि साधनों का केन्द्रीकरण आगे चल कर अर्थसत्ता व राज्यत्ता में भी केन्द्रीकरण को जन्म देता है। रेलगाड़ी के विरोध को उसकी समकालीनता में देखना ज्यादा प्रासंगिक है, तो रेल से जुड़े गहन संदर्भ आज भी हम सभी से सूक्ष्म विश्लेषण एवं अर्थपरक बहस की मांग करते हैं।

वकील, अदालत, न्यायाधीश इनके विरुद्ध गांधी ने कई तर्क दिये हैं। उनकी दृष्टि न्याय को पेशा बनाने के विरोध की है। न्यायालय का काम न्याय देना है, वकील का कार्य सत्य को प्रस्तुत करना है। इस प्रक्रिया को बाजार बनाने का क्या अर्थ है? न्याय देने की यह प्रक्रिया वस्तुतः शोषण, दमन को बढ़ाती है। अगर वकील का कार्य सत्य का साथ देना है तब झूठे मुकदमों की पैरवी का क्या अर्थ है? दरअसल तर्क तो यह निकल कर आता है कि यह सोचना मूर्खता है कि कोई तीसरा व्यक्ति न्याय दे सकता है। जबकि किसी भी मामले के दोनों पक्ष यह अच्छी तरह से जानते हैं कि सत्य किसके पक्ष में है? तीसरा व्यक्ति जो इस मसले में शामिल नहीं है, क्या वह सत्य को अनिवार्यतः जान सकता है? वकील न्याय प्रदान करने हेतु कार्टेल/संघ बना कर सेवाओं का दाम निर्धारित करते हैं, जिससे न्याय खरीद की वस्तु हो जाता है। कहने का अर्थ कि न्याय के बाजार में जिसके पास धन है वह कभी भी किसी भी न्याय को खरीद सकता है। गरीब आम जनता तो इस न्याय बाजार से गरीबी के कारण ा पहले ही बाहर हो जाती है। वकील को वकालत के अध्ययन के दौरान कानून की व्याख्या करना,

सम्मान करना बताया जाता है, मगर यह विडम्बना है कि अन्यायपूर्ण कानून का विरोध करने की पहल वकील नहीं करते हैं। एक अनैतिक कानून के विरुद्ध वकील नहीं जाते हैं। वह उसे कानून के रूप में स्वीकार करते हैं। समस्त न्याय प्रकिया की संरचना शोषण को बढ़ावा देती है। गांधी कानूनी प्रक्रिया व व्यवस्था के ढांचे में बदलाव की बात करते हैं। वकील का कार्य लोगों के बीच अपने ज्ञान के जरिए सहयोग व मेल मिलाप कराना है, सत्य को उजागर करना है। वकील मध्यस्थ का कार्य करेगा। यह कोई ऐसा कार्य नहीं है कि वकील इसे नहीं कर सकता है। स्वयं गांधी जी ने यह करके दिखाया कि ऐसा करना सम्भव है। गांधी इस न्याय प्रक्रिया की प्रेरक शक्ति सत्य को बनाते हैं।

गांधी जी द्वारा डॉक्टर व्यवस्था का विरोध इस पेशे को उद्योग में तब्दील करने का कारण ा था। यह चिकित्सीय पेशा सेवा कम और बाजार ज्यादा हो गया है। समाज में व्याप्त ज्यादा बीमारी डॉक्टरों के लिए अधिक मुनाफे का सूचक है। क्या अस्पतालों की संख्या में वृद्धि को विकास का पैमाना माना जाना चाहिए या बीमार लोगों में वृद्धि का। गांधी जी ने चिकित्सा को एक सेवा माना। अपनी पूरी जिन्दगी उन्होंने चिकित्सा प्रयोगों को समर्पित की। उन्होंने आरोग्य हेतु प्रत्येक व्यक्ति से आशा की कि वह प्रकृति के नियम के मुताबिक जीवन व्यतीत करेगा। आरोग्य प्रत्येक व्यक्ति का हक भी है, कर्त्तव्य भी। चिकित्सा पेशे के व्यवस्था में तब्दील होने के दुष्परिणामों की जो दृष्टि गांधी जी ने प्रस्तुत की, उसे आगे चल कर तत्वज्ञ इवान इलिच ने अपने लेखन के जरिए अधिक तार्किक ढंग से प्रस्तुत किया है।

वकील और डॉक्टर के विरोध के मूल में क्या यह दृष्टि नहीं प्रतीत होती है कि आधुनिक सभ्यता में हर सम्पर्क की कसौटी केवल इतनी ही रह गयी है कि किसी से कितना आर्थिक लाभ कमाया जा सकता है। फिर चाहे इसके लिए अपने पेशे के नैतिक नियमों को भी ताक पर रखना पड़े तो भी कोई बात नहीं है। आधुनिक सभ्यता में व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व से उसके आर्थिक व्यक्तित्व में सिमट जाने का विरोध ही गांधी जी के मुख्य प्रस्थान बिन्दुओं में से एक है।

आधुनिक सभ्यता की हिंसा दृष्टि से उत्पन्न अधिरचना में शिक्षा महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। शिक्षा में आधुनिक सभ्यता एवं हिंसा दृष्टि बहुत सूक्ष्मता से मनोवैज्ञानिक स्तर पर इसकी सहमति की आधारभूमि तैयार करती है। आधुनिक सभ्यता में मनुष्य की आर्थिक मनुष्य के रूप में परिभाषा उसके नैतिक पक्ष की अवहेलना करती है। अतः राजनीति, अर्थशास्त्र व समस्त सामाजिक व्यवहारों की तरह शिक्षा भी नीति से अलग है। शिक्षा अनिवार्यतः किसी भी समाज की जरूरतों के मुताबिक आकार लेती है। कहीं बाहर से लाकर थोपी गयी शिक्षा किसी भी समाज का भला नहीं कर सकती है। शिक्षा का अर्थ सम्पूर्ण व्यक्तित्व के विकास से है। इसे गांधी हक्सले को उद्धृत करते हुए स्पष्ट करते हैं— *''उस आदमी ने सच्ची शिक्षा पायी है जिसके शरीर को ऐसी आदत डाली गयी है कि वह उसके बस में रहता है जिसका शरीर चैन से और आसानी से सौंपा हुआ है काम करता है। उस आदमी ने सच्ची शिक्षा पायी है, जिसकी बुद्धि शुद्ध, शांत और न्यायदर्शी है। उसने सच्ची शिक्षा पायी है, जिसका मन कुदरती कानून से भरा है और जिसकी इंद्रियां उसके बस में हैं, जिसके मन की भावनाएं बिल्कुल शुद्ध हैं, जिसे नीच कामों से नफरत है और जो दूसरों को अपना जैसा मानता है। ऐसा आदमी ही सच्चा शिक्षित (तालीमशुदा) माना जायेगा, क्योंकि वह कुदरत के कानून के मुताबिक चलता है। कुदरत उसका अच्छा उपयोग करेगी और वह कुदरत का अच्छा उपयोग करेगा।''* (हिन्द स्वराज, पृ.- 70-71, फरवरी 2008 पुनर्मुद्रण)

यह स्पष्ट है कि आधुनिक शिक्षा ठीक इसके विपरीत है। इसका मूल हिंसा में होने के कारण ा यह शिक्षा व्यक्ति व्यक्ति, समाज व्यक्ति तथा व्यक्ति प्रकृति को एक दूसरे के विरोध में खड़ा करती है। आज सभी भाषाशास्त्री इस बात से सहमत हैं कि बच्चों की प्राथमिक शिक्षा मातृभाषा में ही होनी चाहिए।



tadbhav.com home page

यंत्रों के सम्बंध में गांधी का विचार बिल्कुल स्पष्ट था, वह यंत्रों के नहीं बल्कि यंत्रों के पीछे पागलपन के विरोधी हैं। यंत्रों की हद बांधने की बात कहते हैं। इसका अर्थ है कि हमारी जिन्दगी में यंत्रों का हस्तक्षेप किस सीमा तक हो इसे जानना आवश्यक है। वह यंत्रों के जरिए होने वाले शोषण एवं गैरवाजिब मुनाफे, उसके असमान वितरण की आलोचना करते हैं। गांधी मानवीय सृजनशीलता को बढ़ावा देने वाले यंत्रों के हिमायती हैं। गांधी के तर्कों के सूक्ष्म विश्लेषण पर इस विचार को आधार मिलता है कि तकनीक का चुनाव हमारी आवश्यकता से जुड़ा हुआ है। हम अपने समाज को कैसा बनाना चाहते हैं, उसी आधार पर तकनीक का चुनाव करते हैं। एक अहिंसक समाज हेतु अहिंसक तकनीक ही आधार हो सकती है। आधुनिक सभ्यता ने ऐसे यंत्रों का चुनाव किया जो हिंसक समाज बनाने वाले थे। आज हम तकनीकी निर्धारणवाद जैसे विषयों पर विमर्श कर रहे हैं, उसकी हल्की अनुगूंज हमें गांधी में दिखायी देती है। आगे चल कर यंत्रों के इस तर्क को तत्वज्ञ कुमारस्वामी और ई.एफ. शूमाकर ने अपनी रचनाओं द्वारा स्पष्ट किया है।

गांधी एकपक्षीय सोच नहीं रखते थे उन्होंने भारतीय सभ्यता के दोषों की चर्चा भी की है। वे स्पष्ट करते है कि बाल विवाह, बहु विवाह, बलि प्रथा इत्यादि दोषों को दूर करके सच्ची सभ्यता की और बढ़ सकेंगे। कुछ आलोचक हिन्द स्वराज की आलोचना इस आधार पर करते हैं कि हिन्द स्वराज में जाति व्यवस्था, छुआछूत, दलित उत्थान आदि के बारे में कोई जिक्र नहीं है। एक तथ्य के रूप में यह स्वीकार करने में कोई गुरेज नहीं है कि इस पुस्तक में इनका कोई जिक्र नहीं है। मगर यह देखना जरूरी है कि पुस्तक को लिखते समय गांधी किस आधारभूमि पर खुद को खड़ा करते हैं? एक हिन्दू के रूप में,एक वकील के रूप में या एक सत्यान्वेषी मानववादी के रूप में। सम्पूर्ण हिन्द स्वराज मानवजाति को समग्रता में अनुभूत कर लिखी गयी रचना है। यह रचना हर शोषण के विरोध को मुखर करती है और मनुष्यता के श्रेष्ठतम साधन अहिंसा, प्रेम के जरिए शोषण से मुक्ति का संदेश देती है। जब गांधी समानता, शोषणसमाप्ति और कल्याण की बात करते हैं तब दलित जाति के किसी भी सदस्य को इससे अलग कैसे रख सकते हैं। गांधी जी ने अहिंसा और सत्य को आधार बना कर सभ्यता की एक समीक्षा प्रस्तुत की है। किसी भी शोषण व दमन के खिलाफ लड़ाई में हिन्द स्वराज हर शोषित व्यक्ति के साथ खड़ी है। अतः यह कहा जा सकता है कि अपनी तार्किक गहराइयों एवं असीम संवेदनशीलता के कारण हिन्द स्वराज दलितों के साथ मिल कर हर शोषण दमन के प्रतिकार का सामना करती है।

वस्तुतः हिन्द स्वराज्य को मानवीय स्वतंत्रता का घोषणापत्र भी कह सकते हैं। यहां हमें यह ध्यान देना चाहिए कि स्वतंत्रता यहां अपने मूल्य रूप में यानि सभी सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक अर्थों में है। स्वतंत्रता अगर मूल्य बन जाती है तो उसका अर्थ हो जाता है कि दूसरों की स्वतंत्रता का हनन न हो। इस कारण गांधी के लिए, अपने उद्देश्य की प्राप्ति का रास्ता अहिंसा से ही सम्भव है। यहां अहिंसा रणनीति नहीं बल्कि एक जीवनदर्शन हो जाती है। इसी जीवनदर्शन का प्रतिपादन इस रचना में किया गया है।

नोट : *समस्त उद्धरण सर्वोदय मंडल, मुम्बई द्वारा जारी 100 खंडों के गांधी वाङ्मय की सीडी के संस्करण I से लिए गये हैं।*